International Journal of Management, IT & Engineering
Vol. 15 Issue 02, February 2025,
ISSN: 2249-0558 Impact Factor: 7.119
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

प्राचीन से आधुनिक भारत तक कृषि आधारित अर्थव्यवस्था : एक ऐतिहासिक अध्ययन

संतरा देवी*

शोधकर्त्री इतिहास एंव पुरातत्व विभाग चौधरी देवीलाल विश्वविद्यालय, सिरसा

डॉ॰ नीलम रानी सहायक आचार्या**

** शोध निर्देशिका : इतिहास एंव पुरातत्व विभाग चौधरी देवीलाल विश्वविद्यालय, सिरसा

विषय विस्तार

पृथ्वी पर मनुष्य सर्वप्रथम कब और किस रूप में प्रकट हुआ, उसका प्रारम्भिक जीवन किस प्रकार का था और सभ्यता के क्षेत्र में उसने किस प्रकार उन्नति की, यह विषय अत्यन्त विवादास्पद है। लेकिन अधिकांश विद्वान यह मानते हैं कि पृथ्वी पर इस विकास में करोड़ों वर्ष लग गये। प्रारम्भ में मनुष्य जीव–जन्तुओं के समान जंगल में रहता था और शिकार के द्वारा अपना जीवन यापन करता था

[1]। पशुओं के मांस के अतिरिक्त वह जंगल में प्राकृतिक रूप से उत्पन्न होने वाले कन्द–मूल, फल व अन्न आदि का प्रयोग भी भोजन के लिए करता था। इस सुदीर्घकाल में मनुष्य धीरे–धीरे उन्नति की ओर बढ़ता गया। प्रारम्भ में वह केवल शिकारी था और समय के साथ–साथ जहाँ वह मछली पकड़ने, कन्द–मूल एकत्र करने और प्राकृतिक रूप से उत्पन्न होने वाले अनाज को इकट्ठा करने के लिए प्रवृत्त हुआ। समय के साथ–साथ मनुष्य सभ्यता के क्षेत्र में निरन्तर आगे बढ़ता गया[2]। तदउपरांत समकालीन परिस्थितियों के कारण मानव का कृषि युग में प्रवेश हुआ ।

प्रस्तुत शोध पत्र में कृषि की भूमिका की पृष्ठभूमि समझने के लिए यह उल्लेखनीय है, किस प्रकार हड़प्पा संस्कृति के विकास के समय तक एक कृषि करने वाले वर्ग के रूप में कृषकों का उदय हो चुका था जो अभिजात, शिल्पियों और व्यापारियों का भरण पोषण करते थे । सिन्धु सभ्यता के पश्चात् वैदिक सभ्यता का प्रारम्भ हुआ। ऋग्वैदिक काल में आर्य समाज का बहुसंख्यक वर्ग कृषि कार्य में संलग्न था, जिस समय आर्यों ने भारत में प्रवेश किया उनकी आर्थिक स्थिति बहुत अधिक सुंगठित और सुव्यवस्थित नहीं थी। प्रारम्भ में पशुपालन को प्रधान व्यवसाय समझने वाले आर्यो ने अब कृषि की ओर भी ध्यान दिया[3]। ऋग्वेद के प्रथम और दसवें मण्डल में कृषि से जुड़ी अनेक क्रियाओं यथा–जुताई, बुवाई,

* शोधकर्त्री इतिहास एंव पुरातत्व विभाग चौधरी देवीलाल विश्वविद्यालय, सिरसा

कटाई तथा मड़ाई[4] का उल्लेख यह स्पष्ट करता है कि इस काल के अन्तिम चरण मे कृषि अर्थव्यवस्था पहले से अधिक मजबूत हो गयी थी।[5] ऋग्वेद में उत्पन्न किए जाने वाले अन्न में केवल 'यव'' और 'धान्य''[6] का ही उल्लेख मिलता है। 600 ईसा पूर्व के आस–पास लोहे का कृषि में व्यापक प्रयोग होने के कारण चावल, ईख और कपास की विस्तृत खेती होने के साक्ष्य मिलते हैं। बड़ी–बड़ी खेतिहर बस्तियों और गाँवों के उल्लेख तत्कालिन साहित्य से मिलने लगते है। मध्य गंगा का कछारी भाग भारी वर्षा और विस्तृत होने के कारण अत्यन्त उपजाऊ क्षेत्रों में गिना जाता हैं। परंतु प्राचीन समय में यह क्षेत्र घने वनों युक्त था। जिसे बिना धातु उपकरणों के कृषि योगय नहीं बनाया जा सकता था । इस समय खोज हुई धातुओं में लोहा महत्वपुर्ण था । जिसके उपयोग से कृषि में क्रांतिकारि परिवर्तन हुए और स्वाभाविक रूप से लौह तकनीक के प्रयोग के साथ ही कृषकों की जीवन निर्वाह वाली कृषि के स्थान पर अतिरिक्त उत्पादन वाली कृषि अर्थव्यवस्था का प्रारंभ हुआ। इस काल के ग्रन्थों में भौंकनी के प्रयोग के स्पष्ट साक्ष्य मिलते है जिनसे कृषि उपकरणों का निर्माण संभव हुआ। चावल और गन्ने की खेती के लिये गहरी जुताई की आवश्यकता लोहे के फालवाले हल से ही पूरी हो सकती थी। कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में वैदिक बलि के विरूद्ध विचाराधारा तथा बौद्ध व जैन धर्मों के जीव अहिंसा के सिद्धांत से पशु रक्षा में सहायता मिली जिसका सर्वाधिक लाभ कृषक वर्ग को हुआ। क्योंकि कृषि कार्य हेतु पशुधन आवश्यक था। दीर्घनिकाय में पशुपालकों, कृषकों एवं व्यापारियों की सहायता करने पर बल दिया गया है। ''बुद्ध ने तो यहाँ तक कहा है कि माता–पिता तथा रिश्तेदारों की भांति पशु भी हमारे मित्र हैं, जो की हमें कृषि करने में मदद करते और राज्य की अर्थव्यवस्था को मजबूत बनते है। मौर्यकाल में भी कृषि अर्थव्यवस्था का एक मुख्य आधार थी। इस काल की अर्थव्यवस्था का ज्ञान हमें विशेषरूप से कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र'[7] तथा मेगस्थनीज की 'इण्डिका' से होता है। मेगस्थनीज के अनुसार भारतीयों की दूसरी जाति में किसान लोग हैं, जो दूसरों से संख्या में कहीं अधिक जान पड़ते हैं और युद्ध करने तथा अन्य राजकीय सेवाओं से मुक्त होने के कारण अपना सारा समय खेती में ही निर्वाह करते हैं। मेगस्थनीज के अनुसार कृषक समाज पवित्र और अबध्य समझा जाता है। युद्ध के समय दोनों पक्ष एक दूसरे का संहार करते हैं परन्तु कृषि में संलग्न मनुष्यों को वे पूर्णतया निर्विघ्न रूप से अपना कार्य करने देते हैं[8]। क्योंकि इसके आधार पर ही अर्थव्यवस्था टिकी थी।

मौर्योत्तर काल में मनु ने यद्यपि जीवन निर्वाह के दस साधनों में कृषि को आठवें स्थान पर रखा है, परन्तु इससे प्राप्त धन को उन्होंने अमृत कहा है। मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त द्वारा गिरनार के निकट बनाये गये सुदर्शन नामक जलाशय का जीर्णोद्धार रुद्रदामन द्वारा करवाया गया था[9]। क्योंकि कृषि के

आधार पर अर्थ व्यवस्था टिकी थी और कृषि सिंचाई व्यवस्था पर इस युग के अभिलेखों में कुएं तथा तालाब आदि बनवाये जाने के भी उल्लेख मिलते हैं ।

गुप्तकाल में शान्ति और सुव्यवस्था के कारण कृषि और पशुपालन का बहुमुखी विकास हुआ। कालिदास के अनुसार राष्ट्रीय आर्थिक विकास में कृषि और पशुपालन का बहुत महत्त्व है। इस काल में राज्य की ओर से अधिकाधिक भूमि को कृषि योग्य बनाये जाने के प्रयास किए जा रहे थे, जिसके लिए राज्य की ओर से भूमि का दान किया जाता था[10]। गुप्तकाल में ग्रामीण अर्थव्यवस्था होने के कारण अधिकांश प्रजा कृषि कार्य में लगी हुई थी। राज्य की समस्त भूमि (कृषि योग्य भूमि) पर राज्य का अधिकार होता था। ग्राम परिषद् ऐसी भूमि जो समुद्रबाह्यः (जिससे राजस्व प्राप्त ना होता हो) अप्रदा (जिसे पहले किसी को न दिया गया हो) अग्रहत (पहले जोती ना गयी हो) मूल्य को लेकर किसी को भी दे सकता था[11]। यह व्यवस्था शायद इस कारण की गयी होगी जिससे सभी कृषक भूमि कर का भुगतान करते रहें और राज्य की अर्थव्यवस्था बढ़ती रहे।

प्रस्तुत शोध पत्र अनुसार कृषि आधारित अर्थव्यवस्था के वर्णन को पूर्ण रूप से समझने के लिये ऐतिहासिक स्रोतों का अध्ययन अति आवश्यक है। क्योंकि इतिहासकार ही एक वैज्ञानिक की भांति उपलब्ध स्रोतों का निष्पक्ष निरीक्षण, परीक्षण, अन्वेषण तथा मूल्यांकन करके अतीत के गर्भ में झांकता है तथा एक सटीक समीक्षा प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। अनेक भारतीय इतिहासविदो तथा पुरातत्ववेत्ताओं ने अपने अथक परिश्रम से इतिहास की पुर्नस्थापना करने हेतु अनेक स्रोतों को प्रस्तुत किया है। इन्हीं अध्ययन स्रोतों के माध्यम से कृषि आधारित अर्थव्यवस्था पर पर्याप्त प्रकाश डाला जा सकता है। जिसके अंतर्गत–वैदिक साहित्य, सूत्र साहित्य एवं धर्मशास्त्र, महाकाव्य, पुराण, बौद्ध साहित्य एवं जैन साहित्य सम्मिलित किये गये हैं। निःसंदेह इन ग्रंथों की रचना का मुख्य उद्देश्य धार्मिक ही था किन्तु इनके गहन अध्ययनोपरान्त तत्कालीन जन जीवन के सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक अवस्था पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। प्रस्तुत शोध पत्र अनुसार कृषि और अर्थव्यवस्था से संबंधित साक्ष्यों को उद्घाटित करने का प्रयास किया गया हैं।

सूत्र साहित्य एवं धर्मशास्त्रः

उत्तर वैदिक काल के अंत तक भारतीय समाज सभ्यता, संस्कृति और उसके साहित्य का बहुत विस्तार हो चुका था। इनके साहित्य का वांग्मय इतना जटिल हो गया था कि ज्ञान का संरक्षण एक समस्या बन गया था। सभी को इन्हे विस्तार में स्मरण एवम् कंठाग्र करना सभंव नहीं हो पा रहा था। अतः सत्रूों का निर्माण इसी आवश्यकता को ध्यान में रख कर किया गया। ऐसी स्थिति में सभी धार्मिक परम्पराओं, विचार और उनकी पद्धतियों को लिखित रूप दिया गया ताकि उनके उच्चारण में किसी प्रकार का परिवर्तन

न हो। इसी क्रम में अनेक विधि–विधानों को एकत्रित कर जोड़ लिया गया, जिससे विभिन्न ग्रंथ निर्मित हुए, यही सूत्र ग्रन्थ कहलाए। इनके अन्तर्गत "वेदांग", यास्ककृत–"निरूक्त", पाणिनीकृत "अष्टाध्यायी" तथा "श्रौत सूत", "गृह्म सत्रू " और 'धर्म सूत्र' है। वेदांगों में 'शिक्षा', 'कल्प', 'व्याकरण', 'निरुक्त', 'छन्द', और 'ज्योतिष' सम्मिलित है। शिक्षा शास्त्र का निर्माण वैदिक स्वरों के उच्चारण के लिये हुआ था। 'कल्पसत्रू – में विधि और नियमों का प्रतिपादन किया गया था, इसके तीन भाग है– 'श्रौत सूत्र, 'गृह्म सूत्र' और 'धर्मसूत्र' 'श्रौत सूत्र' यज्ञीय विधि–विधान संबंधी नियमों से परिपूर्ण है, उसी प्रकार 'गृह्म सत्रू ' में गृहस्थ जीवन से संबंधित घटनाओं, धार्मिक क्रियाओं और संस्कारों का वर्णन है तथा 'धर्मसत्रूों' में रीति, अनुगत, नियम और विधियाँ दी गई हैं, जिनकी रचना गौतम, बौधायन, आपस्तम्ब और वशिष्ठ द्वारा की गई है। 'व्याकरण' ग्रंथों में सबसे महत्वपूर्ण पणिनीकृत "अष्टाध्यायी" है, इस पर ई0पू0 दूसरी शती में पंतजलि ने "महाकाष्य" नामक टीका लिखी, जो मौर्योत्तर कालीन ग्रंथ है। यास्क कृत "निरूक्त" (ई0पू0 पांचवी शताब्दी) में वैदिक शब्दों की व्युत्पत्ति का विवरण है। 'छंदशास्त्र' और 'ज्योतिष' शास्त्र में वैदिक काल से ही विकास हो रहा था। कृषि आधारित आर्थिक स्थिति के अध्ययन से संबंधित सूत्र ग्रंथ निम्न है–"गौतम धर्मसूत्र"[12], "आपस्तम्भ धर्मसूत्र"[13], "बौधायन धर्मसूत्र"[14], "विष्णु धर्मसूत्र"[15], "पारस्कर गृहसूत्र"[16], "आश्वलायन गृहसूत्र"[17], "वशिष्ठ धर्मसूत्र"[18] "अष्टाध्यायी"[19] और निरूक्त[20]। इन ग्रन्थों में कृषि से संबंधित अनके विषयों, जैसे वर्णव्यवस्था, कृषि ग्राम, कृषि उत्सव, श्रमिक, कृषि व्यवस्था; यथा–फसलों की जानकारी, हल जोतना, बीज बोना, सीता भूमि का पूजन, यज्ञादि, भू–व्यवस्था उपकरण एवम् सिंचाई प्रबंध व भू–राजस्व पर महत्वपूर्ण चर्चा की गई है। कालान्तर में सूत्र साहित्य का स्थान स्मृतियों ने ले लिया। इनका रचनाकाल ईसा पूर्व 200 से 600 ईसवी के बीच माना जाता है। इस प्रकार इन स्मृतियों में मौर्योत्तरकाल से लेकर गुप्तकाल के कृषि कार्यो और आर्थिक स्थिति का विवरण प्राप्त होता है। ये इस प्रकार हैं– मनु स्मृति (200 ईसा पूर्व –200 ईसवी), याज्ञवलक्य स्मृति (100 ईसा पूर्व –300 ईसवी), नारद (300 ईसा पूर्व –400 ईसवी), पाराशर स्मृति (300 ईसा पूर्व –500 ईसवी), बृहस्पति स्मृति (300 ईसा पूर्व –500 ईसवी) और कात्यायन स्मृति (400 ईसा पूर्व – 600 ईसवी) आदि। इनमें कृषि भू–स्वामित्व, भूमिदान, भू–राजस्व एवं कराधान, कृषि श्रमिक आदि विषयों पर नियम–कानूनों की व्यवस्था का विस्तृत निवारण किया गया है। स्मृतियों पर कालान्तर में विभिन्न रचनाकारों ने टीकाएं की हैं, जैसे 'मनु स्मृति' पर टीकाकार भारूचि, मेघातिथि, गोविंदराज और कूल्लूक भट्ट हैं। इसी प्रकार 'याज्ञवलक्य स्मृति' पर विज्ञानेश्वर, अपरार्क और विश्वरूप टीकाकार है। इनके माध्यम से भी भारतीय कृषि व विकसित होती अर्थव्यवस्था के विविध पक्षों की जानकारी मिलती है।

महाकाव्यः–

रामायण और महाभारत नामक महाकाव्य वैदिक साहित्य के बाद भारतीय इतिहास में महत्वपुर्ण स्थान रखते है, जो क्रमशः दूसरी और चौथी शताब्दी ईस्वी के लगभग निर्मित हुए थे। ये भारतीय साहित्य एवं संस्कृति के प्रतिनिधित्व ग्रंथ हैं। इनका भारतीय जीवन पर इतना अधिक प्रभाव पड़ा हैं, जितना शायद ही किसी अन्य ग्रंथ का पड़ा हो। रामायण में उस काल की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं राजनीतिक अवस्थाओं तथा सस्थाओं का सुन्दर चित्रण हैं। रामायण में सामाजिक संरचना, परिवार, वर्णाश्रम, कृषि व्यवस्था, पशुपालन, व्यवसाय, श्रम विभाजन, राजतंत्रीय अवस्था आदि का उल्लेख किया गया है।[21] कृषकों के सबंध में रामायण में हल के महत्व, सीतायज्ञ, खेती, अन्न कोठारो, खाद्यान्नों की संख्या एवं स्थिति आदि की जानकारी दी गई है।[22] महाभारत एक अत्यन्त वृहद् महाकाव्य ग्रंथ है। यद्यपि इसमें पाण्डवों एवम् कौरवों के युद्ध की ही प्रधानता है तथापि इसमें गाथाएं, वशं परम्पराओं का उल्लेख, राजनीति, धर्म, दर्शन आदि का समावेश भी है। महाभारत के विभिन्न पर्वों, विशेषकर वन पर्व, शांति पर्व तथा अनुशासन पर्व में बहुत सी नीतिगत विषय की सामग्रियाँ संकलित हैं। यह सामग्री धर्म, कर्म, राजनीति, कूटनीति, नीतिशास्त्र, तत्वज्ञान, दर्शन आदि विभिन्न विषयों से संबंधित है। महाभारत अनुपम जातीय इतिहास है, जो हिंदु संस्कृति, दर्शन एवं नैतिकता का सम्पूर्ण चित्रण प्रस्तुत करता है। ये सामाजिक परिस्थितियों का प्रतिबिम्ब हैं। इसमें उस युग की वर्णाश्रम, जाति व्यवस्था, परिवार, शिक्षा, स्त्रियों की दशा, विवाह, रहन–सहन एवं खान–पान व्यवस्था, कर्म सिद्धांत आदि के विषय में पता चलता है।[23] कृषि से सबंधित महाभारत के शांति पर्व, उद्योग पर्व, वन पर्व आदि हैं।[24] इनमें कृषिकीय व्यवस्था, कर व्यवस्था, राज्य एवम् कृषकों के संबंधों आदि का उल्लेख है।[25] महाकाव्यों से प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर उत्तरवैदिक काल मे हुए कृषि विकास कार्यो का अध्ययन किया जा सकता है।

पुराणः–

भारतीय एेतिहासिक कथाओं का सबसे अच्छा क्रमबद्ध विवरण पुराणों में मिलता है। इनके रचयिता लोमहर्ष व उनके पुत्र उग्रश्रवा माने जाते है। इनकी संख्या 18 है। इनका रचना काल प्रायः ईस्वी सन के प्रारम्भ के पश्चात् की पहली अथवा दूसरी सदी से माना जाता है। अठारह् पुराणों में से केवल पाँच (मत्स्य, वायु, विष्णु, ब्रह्मण्ड, भागवत) में ही राजाओं की वंशावली के साथ–साथ शैशुनाग, नंद, मौर्य, शुंग, कण्व, आंध्र एवं गुप्त वंशों के राजाओं की वशंवली भी मिलती है। इनमें मत्स्य पुराण सबसे प्राचीन व प्रमाणिक ग्रंथ हैं। मौर्यों की ऐतिहासिक जानकारी के लिए विष्णु पुराण, सातवाहनों के लिए मत्स्य पुराण, गुप्तों के लिए वायु पुराण महत्व के है। छठी शताब्दी ईस्वी पूर्व के इतिहास के लिए पुराण एकमात्र स्रोत तो हैं ही, ये प्राचीन काल से लेकर गुप्तकाल की एेतिहासिक घटनाओं से भी परिचय कराते है। कृषि सबंधित जानकारी के लिए अग्निपुराण का बहुत महत्व है, इसमें राजतंत्र के साथ–साथ कृषि सम्बन्धी

विवरण भी दिए गए हैं।[26] कृषि आधारित समाजार्थिक स्थिति के संबंध में विष्णुपुराण, मत्स्यपुराण, वायुपुराण, ब्रह्म पुराण, गरूड़ पुराण, हरिवंश पुराण आदि महत्वपूर्ण है। इनमें कृषकों के कृषि कार्य, धार्मिक अनुष्ठान, भू–स्वामित्व की स्थिति, करारोपण व्यवस्था, श्रमिक एवं दासों आदि विषयों का उल्लेख मिलता है।[27]

बौद्ध साहित्यः–

शोध क्षेत्र के विषय अनुसार बौद्ध साहित्य का भी विशेष महत्व हैं। सबसे प्राचीन बौद्ध ग्रंथ 'त्रिपिटक' है। इनके नाम –'सुत्तपटिक', 'विनयपटिक' और अभिधम्मपिटक है, ईसा से पूर्व की शताब्दियों में भारत के आर्थिक, सामाजिक व धार्मिक जीवन पर पर्याप्त प्रकाश डालते हैं। सुत्तपटिक में बुद्ध के धार्मिक विचारों और वचनों का संग्रह है। विनयपिटक में बौद्ध संघ के नियमों का उल्लेख है और अभिधम्मपटिक में बौद्ध दर्शन की विवेचना है। 'त्रिपिटक' के अतिरिक्त बौद्ध साहित्य में जातक कथाएं, लंका के इतिवृत्त– महावंश और दीपवंश, दिव्यावदान, बौद्ध रचना मिलिंदपन्हो, आर्य–मंजु–श्री–मूल–कल्प, अंगुत्तर निकाय आदि सम्मिलित हैं। जातकों में बुद्ध के पर्वूजन्मों की काल्पनिक कथाएँ है। इनकी रचना ईसा पूर्व पहली शताब्दी में आरम्भ हो चुकी थी। लंका इतिवृत–दीपवंश व महावशं की रचना क्रमशः चौथी व पांचवी शताब्दी में हुई, इन दोनों पालि ग्रंथों से मौर्यकालीन इतिहास के विषय में सूचना मिलती हैं। एक अन्य पालि ग्रंथ नागसेन द्वारा रचित 'मिलिन्दपन्हो' है, जिसमें हिन्द यवन शासक मेनाण्डर के विषय में सूचना मिलती है, इसमें ईसा की पहली दो शताब्दियों के उत्तर पश्चिम भारत के जन–जीवन की झलक देखने को मिलती है। संस्कृत बौद्ध ग्रंथ 'दिव्यादान' से अशोक के उत्तराधिकारियों से लेकर पुष्यमित्र शुंग तक के शासकों के विषय में सूचना मिलती है। 'अंगुत्तर निकाय' में सोलह महाजनपदों का वर्णन मिलता है। प्राचीन भारतीय बौद्ध ग्रंथों में कृषिकीय जीवन के अनेक पहुलओं पर चर्चा की गई हैं। वास्तव में बुद्ध के समय से ही पूर्णतया कृषि पर आधारित समाज की स्थापना हुई। बौद्ध ग्रंथों में कृषि, भूस्वामित्व, खाद्यान्न कृषक व राज्य के मध्य सबंधों आदि के विषय में विवरण मिलता है।[28] जातक कथाओं में कृषकों के जीवन सुख–दुख, रीति–रिवाज, अनुभूतियों, व्यवहारों के अनेक प्रसंग प्राप्त होते हैं।[29] इसके अतिरिक्त कृषि, अनाज, बीज, सिंचाई, दुर्भिक्ष आदि का विवरण भी इनसे प्राप्त होता है।[30] जातकों के अलावा विनयपिटक, दीर्घनिकाय, मज्झिमनिकाय, अंगुत्तर निकाय, संयुक्त निकाय, सुत्तनिपात, हलिद्दक सुत्त, देसना सुत्त, नालंदा सुत्त, मणिचुल सुत्त आदि कृषकों से सबंधित अनेक विषयों में महत्वपर्णू जानकारी प्राप्त कराते हैं। पाँचवी शताब्दी में प्राचीन पालि ग्रंथों पर अनेक टीकाकारों नें टीकाएं लिखी; इनमें बुद्धघोष व धर्मपाल का नाम महत्वपर्णू है। इन टीकाओं में बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार टीकाकारों ने पुरानी शिक्षाओं व घटनाओं की व्याख्या की और कृषिक समाज कि लग–भग सभी स्थितियों कि जानकारी प्रदान कि है, जो शोध मे वर्णन करने का प्रयास किया गया है ।

जैन साहित्यः– बौद्ध साहित्य के समान ही जैन साहित्य में भी प्राचीन भारतीय इतिहास की महत्वपूर्ण सामग्री विद्यमान है। जैन ग्रंथ 'आगम' कहलाते हैं। इनमें सबसे महत्वपूर्ण बारह अंग हैं, जिनमें प्रमुख आचरांग सूत्र, भगवती सूत्र, नायधम्मकहा, उवासगदसाओं आदि हैं। इन बारह अंगों में प्रत्येक के उपांग भी है। इन पर अनेक भाष्य लिखे गये है, जो निर्युक्ति, चूर्णि, टीका कहलाते हैं। 'भगवती सूत्र' में सोलह महाजनपदों का उल्लेख मिलता है। 'भद्रबाहुचरित्र' से चंद्रगुप्त मौर्य के राज्यकाल की घटनाओं पर कुछ प्रकाश पड़ता है। ऐतिहासिक दृष्टि से वृहत्कल्प सूत्र, आवश्यकचूर्णि, कालिकापुराण, कथाकोश महत्वपूर्ण जैन ग्रंथ है। कालांतर में अनेक कथाकोशों और पुराणों की रचना हुई, जैसे समरादित्यकथा, धूर्ताख्यान, कुवलयमाला, कथाकोष प्रकरण, आदिपुराण, उत्तरपुराण आदि। जैन लेखकों का भौतिक जीवन के प्रति दृष्टिकोण अत्यन्त व्यवहारिक था। इन्होंने अनेक सामाजिक विषयों को अपनी लेखनी में उतारा, जिनमें कृषि व्यवसाय, अनाजों की सख्या, पशुपालन, साहुकार व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था, स्त्रियों की दशा, दासप्रथा, आदि प्रमुख हैं। जैन साहित्य का मुख्य ध्येय अहिंसामूलक सिद्धांतों को समाज में प्रतिपादित करना था, जिसका सर्वाधिक लाभ कृषि करने वाले समुदाय को ही था। कृषि से संबंधित प्रमुख जैन ग्रंथ नायाधम्मकहा, वृहत्कल्पसूत्र भाष्य, आवश्यकचूर्णी आदि हैं।[31]

लौकिक साहित्यः–

प्राचीन भारत में कृषि कार्य में लगे लोगों की आर्थिक व सामाजिक स्थिति से सम्बन्धित लौकिक साहित्यों में मौर्यकाल से लेकर गुप्तकाल तक के विविध पक्षों का वर्णन किया गया हैं। जिसके अन्तर्गत अनेक ऐतिहासिक, अर्द्ध–ऐतिहासिक ग्रंथों एवम् जीवनियों का विशेष रूप से उल्लेख किया जाता है। इनके लेखकों द्वारा तत्कालीन आर्थिक व सामाजिक स्थितियों का यथावत् अवलोकन करने का प्रयास् किया गया था, जो ऐतिहासिक स्रोतों के रूप में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। मौर्यकालीन इतिहास में "अर्थशास्त्र" का विशिष्ट स्थान है। जिसमें कौटिल्य ने कृषि, पशुपालन और व्यापार को 'वार्त्ता' कहा है तथा इन्हें वैश्यों की वृत्ति स्वीकार किया। 'अर्थशास्त्र' में इन्होनें कृषि से सम्बन्धित अनेक विषयों पर विधि–विधानों का निर्माण किया है। इन्होनें वर्ग आधार पर कृषि जिसमें शूद्र कृषकों, कृषि ग्राम, कृषि श्रमिक एवम् दास आदि मुख्य सामाजिक विषयों पर चर्चा की है। इसके साथ ही कृषि प्रक्रिया एवं उसकी सम्पूर्ण व्यवस्था, भूमि, भूमि का स्वामित्व, भू–राजस्व, उपज, खाद, सिंचाई, उपकरण, पशु चारागाहों, बीज, कृषि से सम्बन्धित अधिकारी एवम् उनके कर्तव्य आय–व्यय आदि पर विधानों का ब्यौरा दिया है।[32] क्योंकि कृषि इस समय राज्य कि अर्थव्यवस्था का आधार थी। इसी क्रम में मौर्योत्तर कालीन इतिहास में पंतजलि कृत "महाभाष्य", हाल कृत "गाथा सप्तशती", अश्वघोष की "सौन्दरानन्द काव्य", नागसेन की "मिलिंदपन्हो" , अश्वघोष की "बुद्धचरित" आदि हैं। इनमें तत्कालीक कृषि एवम् आर्थिक स्थिति के विषय में चर्चा की गई

है। इसके अन्तर्गत कृषि कार्य करने वालों का समाज में स्थान, कृषि प्रक्रिया, कृषि कार्य में बाधा पंहुचाने वालों के लिए दण्ड एवम् कानून व्यवस्था आदि से सम्बन्धित अनेक विधि–विधानों की व्याख्या की गई हैं। जो कि तत्कालिन राज्यो कि अर्थव्यवस्था को संभाले हुए था ।[33] इसी प्रकार गुप्तकालीन स्रोतों में प्रमुख हैं– कालीदास के ग्रंथ "रघुवशंम्", "अभिज्ञानशाकुंतलम", "मेघदूत", कामंदकीय का "नीतिसार", अमर सिंह का "अमरकोष", बाणभट्ट का "हर्षचरित्" वात्सयायन का "कामसूत्र", वराहमिहिर का "वृहत्संहिता" आदि हैं। इन साहित्यों में जुताई, बुआई, रोपाई, लवनी, ऋतुज्ञान, बीज ज्ञान, सिंचाई, धान्य एवम् धान्यकोठार, कृषक ग्राम व्यवस्था, दास, भू–व्यवस्था, आय–व्यय आदि का विस्तृत विवरण दिया गया है।[34] अतः साहित्यिक स्रोत जन–जीवन की स्थिति पर प्रकाश डालने वाले अत्यन्त मूल्यवान प्रमाणक है। यद्यपि इनका दृष्टिकोण धार्मिक था तद्‌पि शोध क्षेत्र अनुसार कृषक समाज के प्रत्येक पहलुओं का प्रस्तुतिकरण किया गया है, जो वर्तमान में भी स्वीकार्य है। साहित्यकारों द्वारा तत्कालीन अनुभवों व विद्वता के आधार पर मनुष्य के जीवन के लगभग सभी पक्षों को अपने ग्रंथों में उतारा गया। यही कारण है कि इनके द्वारा दी गई जानकारी इतिहास के पुनर्निर्माण में लाभकारी सिद्ध होती आई है।

प्राचीन से वर्तमान

प्राचीन भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से पारंपरिक और प्राकृतिक पद्धतियों पर आधारित थी। इस समय खेती के लिए अधिकांशत बैल, हल, और हाथ से काम करने वाली मशीनों का ही उपयोग होता था। सिंचाई के लिए नदियों, तालाबों और वर्षा पर निर्भरता थी। प्राचीन भारत में जैविक उर्वरक जैसे गोबर और पशु खाद का उपयोग प्रमुख था, जिससे भूमि की उर्वरता बनाए रखने में मदद मिलती थी। इस समय कृषि पूरी तरह से आत्मनिर्भर थी और स्थानीय स्तर पर ही कृषि उत्पादों की आपूर्ति की जाती थी[35]। इसके विपरीत, आधुनिक कृषि अर्थव्यवस्था ने वैज्ञानिक विधियों और तकनीकी नवाचारों का इस्तेमाल किया है। 1960 के दशक में हरित क्रांति के दौरान, उन्नत बीज, रासायनिक उर्वरक, और सिंचाई प्रणालियाँ जैसे ड्रिप और स्प्रिंकलर ने कृषि उत्पादकता में वृद्धि की। इस समय कृषि में मशीनों का उपयोग बढ़ा, जैसे ट्रैक्टर और हार्वेस्टर, जिससे खेती का काम तेज और कुशल हो गया। कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई, लेकिन इसके साथ–साथ रासायनिक उर्वरक और कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग से पर्यावरणीय समस्याएं भी उत्पन्न हुई हैं, जैसे जलवायु परिवर्तन और भूमि की उर्वरता में कमी।[36] आधुनिक कृषि को वैश्विक व्यापार और उद्योग से भी जोड़ दिया गया है। किसानों को न्यूनतम समर्थन मूल्य (डैच) जैसी योजनाओं का लाभ भी मिलने लगा है, जिससे उनकी आय में स्थिरता आई है। हालांकि, इस समय जलवायु परिवर्तन, भूमि की गुणवत्ता में गिरावट और जल संकट जैसी समस्याओं का सामना

भी करना पड़ रहा है। इन समस्याओं को हल करने के लिए जैविक और सतत कृषि पद्धतियों की ओर रुझान बढ़ा है[37]।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध पत्र के अध्ययन उपरांत हम कह सकते है कि लौह कि खोज, मुद्रा का प्रचलन, विदेशी व्यापार व तत्कालिन राजाओं कि साम्राज्यवादी नीती के बाद किसानो कि आय में वृद्धि हुई और ये कृषि अधिशेष (सरप्लस) उत्पादन के द्वारा राजाओं, सामन्तों, सैनिकों, पुरोहितों, मंदिरों, मठों, सन्यासियों, दस्तकारों और व्यापारियों आदि का पोषण करने में समर्थ सिद्ध हुये। प्राचीन भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग पर आधारित थी। जल प्रबंधन, सिंचाई प्रणालियाँ और प्राकृतिक उर्वरकों का उपयोग समाज को स्थिर और आत्मनिर्भर बनाता था। इसके विपरीत, मध्यकाल में ज़मींदारी व्यवस्था और शोषण ने किसानों की स्थिति को प्रभावित किया। आधुनिक भारत में हरित क्रांति के माध्यम से कृषि उत्पादन में वृद्धि तो हुई, लेकिन रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग से पर्यावरणीय समस्याएं बढ़ी। वर्तमान में, सतत कृषि पद्धतियाँ जैसे जैविक खेती और जल प्रबंधन के उन्नत तरीके कृषि क्षेत्र में सुधार ला सकते हैं। इस प्रकार, प्राचीन और आधुनिक कृषि पद्धतियों को संतुलित करके, हम एक स्थिर और पर्यावरण के अनुकूल कृषि अर्थव्यवस्था की ओर बढ़ सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ एवं टिप्पणियाँ

[1] गुप्ता, देवेन्द्र कुमार, *प्राचीन भारत में व्यापार,* कॉलेज बुक डिपो, दिल्ली, 2007 पृ0 8.

[2] बाशम, ए0एल0, *अद्भुत भारत,* शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, आगरा, 1998. पृ0 1–2.

[3] दामोदर धर्मानन्द कौसाम्बी, *प्राचीन भारत की सभ्यता और संस्कृति,* इन हिस्टोरिकल आउटलाइन, लन्दन, 1965. पृ0 98।

[4] *ऋग्वेद,* वैदिक शोध संस्थान, पूना, 1939–1946, 4.57.81,

[5] *ऋग्वेद,, पूर्वोद्धृत,* 10.90.12 ।

[6] *ऋग्वेद,, पूर्वोद्धृत,* 10.90.12।

[7] कौटिल्यकृत, सम्पा0 आर0 शामशास्त्री, *अर्थशास्त्र,,* मैसूर, 1901, 1.3.6–7,

[8] जॉन डब्ल्यू मैक्रिन्डल, *एन्सिअन्ट इण्डिया एज डेस्क्राइब्ड़ बाई मैगस्थनीज़ एण्ड एरियन,* लो प्राइस पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2015, पृ0144।

[9] डी0 एन0 झा, *स्टडीज इन अर्ली इण्डियन इकॉनामी,* दिल्ली विश्वविद्यालय, 1984, पृ0 61।

[10] कालिदासकृत, *रघुवंशए* निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1916, ग्टण्2.3,

[11] अमरसिंह कृत, *अमरकोश,* मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1966–68, पृ0 1, 5–6, 70–71, 100, 13, 72,

[12] *गौतम धर्मसूत्र,* (अंग्रेजी अनुवाद) जार्ज बूलर, से0 वु0 ई0, भाग 2, वाराणसी, 1965, 1.7.7, 2.1.62, 4.6.13, 1.4. 4–11 ।

[13] *आपस्तम्भ धर्मसूत्र,* चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, 1969, 2.10.26.10, 1.1.1.5, 1.7.20.5, 2.2.28.2 ।

[14] *बौधायण धर्मसूत्र,* चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, 1934, 2.2.4.20, 1.10.18.4, 1.11.20.1 ।

[15] *विष्णु धर्मसूत्र,* से0 बु0 ई0, भाग 7, 2.15 ।

[16] *पारस्कर धर्मसूत्र,* सम्पा0 ए0 ए0 फ्यूहरर, बम्बई, 1918, 1.2, 2.9 ।

[17] *आश्वलायन गृहसूत्र,* अनु. डॉ सत्यव्रत शास्त्री, प्रकाशन चौखंबा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, 1966, 1.15.10.1 ।

[18] *वशिष्ठ धर्मसूत्र,* सम्पा0 ए0 ए0 फ्यूहरर, बम्बई, 1916, 1.42, 8.1 ।

[19] *अष्टाध्यायी,* पाणिनिकृत, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई, 1929, 5.3.88, 4.2.73, 3.3.74, 6.3.60, 5.1.56, 4.4.92, 3.3. 119, 4.2.51, 5.2.2 ।

[20] *निरूक्त,* वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई, 1912, 1.16 ।

[21] *रामायण,* सम्पा0 भगवद्दत, लाहौर, 1931, 2.50.8–11, 2.100.44–45, 1.5.17, 2.80.1।

[22] *रामायण,* पूर्वोद्धृत, 2.94.37, 2.68.22, 2.49.3, 2.49.3, 2.74.11।

[23] *महाभारत,* नीलकण्ठ की टीका सहित, पूना, गीता प्रेस, गोरखपुर. 1929–33, 12.183.6, 6.42.44।

[24] *महाभारत,* पूर्वोद्धृत, 12.34.14, 12.36.14; *शान्तिपर्व,* 90.7, 186.20, 69.44, 70.12;*अनुशासन पर्व,* 58.10–18, 64.6; *भीष्मपर्व,* 5.5; *आदिपर्व,* 199.47, 102.9 ।

[25] *महाभारत,* पूर्वोद्धृत, 12.262.86 ।

[26] *अग्निपुराण* 282.3–4, 282.8–9, 282.6–8, 282.12।

[27] *विष्णुपुराण* (अंग्रेजी अनुवाद) एम0 एन0 दत्त, वाराणसी, 1967, 5.15, 9.279; *गरूड़पुराण* , सम्पा0 खेमराज श्रीकृष्णदास, बम्बई, 19061.200.9, 1.59.17, 1.59.20; *हरिवंशपुराण* 43.116–122, 43.127 ।

[28] *दीर्घनिकाय* सम्पा0 रिज डेविड्स, लन्दन, 1911, 1.प्प.5.96, 1.प्.2.21, 2.प्.4.34, 3.प्ट.3.21; *विनयपिटक–चुल्लवग्ग,* रिज डेविड्स (अग्रेंजी अनुवाद), ऑक्सफोर्ड, 1771–74 राहुल सांस्कृत्यायन (हिन्दी अनुवाद), सारनाथ, 1934, 2.2; *मज्झिम निकाय–द्वितीय* 1.7.12; *संयुक्त निकाय,* प्.70–71, प्.72; *अंगुत्तर निकाय,* प्ट.281; *सुत्तनिपात,* प्.14.

[29] *जातक,* ई0वी0कावेल (अग्रेंजी अनुवाद), कैम्ब्रिज, 1794–1913, 1 पृ0 402, 4 पृ0 14, 2 पृ0 134 ।

[30] *दीर्घनिकाय,* पूर्वोद्धृत, प्ट.1.1; प्प्प.7.30; प्ट.2.16; *जातक,* पूर्वोद्धृत, ट.219, 412; प्प.126.

[31] *वृहत्कल्पभाष्य* 1.123.9; *आवश्यकचूर्णि* 60.81; *नायाधम्मकहा* 7.86, 7.75।

[32] *अर्थशास्त्र,* पूर्वोद्धृत, 2.1, 2.24, 2.2, 2.15, 2.24, 13.10, 13.2, 7.17।

[33] *महाभाष्य,* पंतजलिकृत, सम्पा0 एफ0 कीलहार्न बम्बई, 1892–1907, 5.2.112, 4.4.91, 8.4.8, 1.3.9, 5.1.119, 2.4. 12, 4.1.63, 3.2.4, 5.2.

[34] *रघुवंश* , कालिदासकृत, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1916, 16.2, 4.20, 4.67, 4.6, 4.20; *अमरकोश* अमरसिंह कृत, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1966–68, 2.9.13, 3.3.222; *वृहत्संहिता* 8.8–9, 8.30, 19.6, 2.3.

[35] श्रीराम शर्मा, *प्राचीन भारतीय कृषि,* भारती पुस्तक माला, 2015, पृ. 102.

[36] कृषक वर्धन, *आधुनिक कृषि और पर्यावरण,* राय बुक्स, 2017, पृ. 150.

[37] सुनील कुमार, *भारत में हरित क्रांति और कृषि उत्पादन,* समाज सेवा प्रकाशन, 2019, पृ. 98.